[Shn S. N. Mazumdar.] British capital. For example, Shri Ramaswami Mudaliar who is a Member of this House is very friendly with the British but when he faces the British shipowners in the International Conference, he has to take the stand that British shipowners are acting in a way detrimental to the development of our shipbuilding industry. Similar is the case in regard to chemical industry and soap. The very same gentlemen who are hand In glove with the British friends— the British capitalists—complain that Government is succumbing to the pressure of the British people and are not allowing the national shipbuilding industry to develop. If I had more time at my disposal, I could have developed this very theme to show that the second Five Year Plan cannot really be implemented without coming into conflict with the hold of the British capital on our country.

Lastly, I would like to say that I would have been prepared to accept any amendment to this Resolution but none has been forthcoming. The proposals for the second Five Year Plan have not yet been finalised; they have not been fully explored. Here also, I do not say that every word or comma in my Resolution is final. The principle and the spirit is there. If the hon. Members who said that they supported the principle had come forward with suitable amendments to show the correct way of implementing the spirit, I would have been prepared to consider them but they have not done that. I commend my Resolution to the House knowing full well that it will be defeated. It may be defeated today but we have seen from past experience that whatever the Opposition says may be defeated but the logic of facts, the logic of history will show what truth there is in what we say.

THE VICE-CHAIRMAN: (SHRI H. C. MATHUR) : The question is:

"This House is of opinion that with a view to successfully working the second Five Year Plan, Government should—

(a) fix a ceiling on profits to. all industrial undertakings in the country at a rate not exceeding 2 to 3 per cent, above the bank rate, and

(b) provide for the utilisation of profits over and above the ceiling so fixed in granting loans to industries which are in need of such assistance."

The motion was negatived.

RESOLUTION *RE* COMMISSION ON PRIMARY EDUCATION

श्री कन्हैयालाल डी० वैद्य (मध्य भारत) : उपाध्यक्ष महोदय, मेरा प्रस्ताव इस प्रकार हैं :

"This House is of opinion that Government should appoint a Commission immediately to-examine the kind of primary education that obtains in the country and to recommend suitable measures with a view to making it available to all children of school-going age".

[THE VICE-CHAIRMAN: (SHRIMATI CHANDRAVATI LAKHANPAL) in the Chairl

उपाध्यक्ष महोदया, मुझे इस बात की प्रसन्नता हैं कि मैं शिक्षा से सम्बन्ध रखने वाले एक एंसे आवश्यक विषय पर चर्चा आपकी उपस्थिति में कर रहा हूं । प्राइमरी एजूकेशन के विषय में, मैं अधिक कहूं इसके पहले एक दो बातों पर प्रकाश डाल देना चाहता हूं और वह वह कि यह जो प्रस्ताव यहां पर रखा गया हैं वह दो रूप में हमने सदन के सामने भेजा था । हमारे बहुत से मित्रों ने अलग अलग प्रस्ताव प्रस्तुत किये थे और इस प्रस्ताव पर एक संशोधन

श्री सरवटे जी ने मूव किया हैं, वह इस प्रस्ताव का एक रूप था। किन्तु जिस स्वरूप में यह प्रस्ताव एजेन्डे पर रखा गया हैं, उस पर में चर्चा के लिए एक दो शब्द कह देता हूं।

प्राइमरी एजुकेशन एक ऐसा विषय हैं, जिसका सम्बन्ध देश के करोड़ों बच्चों से जुड़ा हुआ हैं। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद इस देश की जनता को यह आशा स्वाभाविक रूप से हुई थी कि देश के बच्चे शिक्षित किये जायंगे और उनकी शिक्षा का उचित प्रबन्ध राज्य की ओर से होगा। यही नहीं जब हमारा संविधान बना तो इस संविधान में इस बात को स्पष्ट रूप से स्टेट डाइरेक्टिव प्रिंसिपिल में स्वीकार किया गया था और एक निश्चित आदेश संविधान ने इस विषय में हमारी सरकार को दिया हैं। वह आदेश संविधान की धारा ४५ में इस प्रकार से हैं :

> "The State shall endeavour to provide, within period of ten years from the commencement of this Constitution, for free and compulsory education for all children until they complete the age of fourteen years."

जब संविधान की इस धारा में इस विषय में स्पष्ट रूप से यह कह दिया गया हैं तब मेरी समझ में नहीं आता कि मैं इस विषय में यहां पर कुछ अधिक कहूं। इस देश की जो राज्य सरकारें हैं उनके हाथों में शिक्षण की व्यवस्था हैं। केन्द्र की ओर से जनता के शिक्षा के प्रश्न पर कुछ हस्तक्षेप समय समय पर किया जाता हैं और उच्च शिक्षण के विषय में एक निश्चित पालिसी और निश्चित सिद्धान्त के अनुसार शिक्षण व्यवस्था देने के बारे में योजना बनाई जाती हैं। किन्तु अगर प्राइमरी एजुकेशन का प्रश्न आप लें तो सारे देश में भिन्न भिन्न प्रकार से उसकी व्यवस्था चल रही हैं। किसी राज्य की सरकार ने कोई पद्धति अपना रखी हैं और किसी राज्य ने कोई पद्धति अपना रखी हैं। प्रत्येक राज्य में भिन्न भिन्न प्रकार की पुस्तकें और सिलेबस हैं और उनमें जो पढ़ाई की व्यवस्था हैं उसके भी भिन्न भिन्न रूप हैं। शिक्षण के सम्बन्ध में, किताबों के सम्बन्ध में या किसी सम्बन्ध में अभी तक सारे देश में एक रूप नहीं हो पाया हैं और उसका परिणाम यह हैं कि आज हमारे सारे देश में शिक्षा एक समस्या बनी हुई हैं। जहां तक संविधान की इस धारा का प्रश्न हैं, सरकार का यह एक निश्चित कर्तव्य हैं, सरकार के ऊपर यह एक निश्चित ड्यूटी आ गई हैं कि वह दस वर्ष में देश भर के सारे चौदह वर्ष की अवस्था के बच्चों को कम्पलसरी शिक्षण के द्वारा शिक्षित करने की व्यवस्था करें। जो आंकड़े समय समय पर हमारे सामने सरकार की ओर से रखे जाते हैं उनको देखते हुये हमें इस बात की शंका होती हैं कि क्या वास्तव में हमारे संविधान की इस धारा के अनुसार हमारे देश में चौदह वर्ष की अवस्था के जो बच्चे हैं वे दस वर्ष में शिक्षित हो सकेंगे और उन दरवाजों तक, जहां आज अन्धकार ने अपना साम्राज्य फैला रखा हैं, शिक्षा की ज्योति दस वर्ष में पहुंच पायेगी या नहीं। इतने वर्षों के बाद शिक्षण के जो आंकड़े हमारे सामने हैं, उस की गति को देखते हुये तो मैं समझता हूं कि दस वर्ष तो क्या पचास वर्ष भी इस गति से चला जाय तब भी संविधान के अन्तर्गत प्राइमरी एजुकेशन की जो व्यवस्था हैं उसकी पूर्ति नहीं हो सकती। संविधान की पवित्रता की रक्षा करने की जिम्मेदारी हमारे ऊपर आती हैं, पार्लियामेंट पर आती हैं और सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित करना एक नागरिक के नाते हमारा कर्तव्य होता हैं। ऐसी दशा में मैं यह समझता हूं कि मेरा यह प्रस्ताव सामयिक हैं कि शिक्षण की पद्धतियों के विषय में सरकार को एक निश्चित नीति अपनानी चाहिये और सारे देश के लिये एक निश्चित क्रम की व्यवस्था करनी चाहिये जिससे जो गरीब और साधारण वर्ग के लोग देहातों में रहते हैं उनको भी शिक्षा से लाभ मिल सके और चौदह वर्ष की अवस्था के जितने बच्चे हैं वे कम से कम अपनी प्राइमरी शिक्षा पूरी कर सकें। यदि इस प्रकार की व्यवस्था हमने नहीं की तो दस वर्ष

[श्री कन्हैयालाल दाँ० वैद्य]

में हम अपने देश के सारे बच्चों को शिक्षित नहीं कर पायेंगे और यह हमारे लिये एक कलंक की बात होगी कि हम संविधान की इस पवित्रता की रक्षा नहीं कर पाये। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद यदि शिक्षा के विषय में जनता हमसे कोई अपेक्षा करे, तो उसका आदर करना उचित है। जहां तक रोजी का प्रश्न है या दूसरे प्रश्न हैं, उनको भी ध्यान में रखना आवश्यक है। अभी अभी हमने एक लम्बे चौड़े प्रस्ताव पर विचार किया है। इस तरह देश की प्रगति के लिये जो आवश्यक बातें हैं उनका करना जितना आवश्यक है उतना ही हमारे शिक्षा मंत्रालय को और हमारे प्लानिंग कमीशन को हमारी शिक्षा व्यवस्था पर सर्वप्रथम और पूरी शक्ति से ध्यान देना आवश्यक है और इस काम के लिये जितने आवश्यक धन की जरूरत हो उसको स्वीकार करना चाहिये।

जहां तक शिक्षण का सम्बन्ध है, जैसा कि हमारे संविधान में दिया गया है, प्राइमरी एजूकेशन सब बच्चों के लिये कम्पलसरी होगी और सब को मुफ्त प्राप्त कराई जायगी। ऐसी व्यवस्था करने में धन की बड़ी आवश्यकता होगी। लेकिन सरकार को जहां दूसरे कामों के लिये धन उपलब्ध करना पड़ता है, अपनी योजनाओं को पूरा करने के लिये धन की व्यवस्था करनी पड़ती है, वहां शिक्षा के विषय में भी सरकार का वह पहला कर्तव्य है कि वह धन की व्यवस्था करे। आज जिन राज्यों के हाथ में केन्द्र ने शिक्षा की जिम्मेदारी सौंप रखी है, उनको जिस मंत्रालय के हाथ में धन की व्यवस्था करने का अधिकार हो वह इतनी सहायता प्रदान करे कि वे अपने राज्य के १४ वर्ष के बच्चों को संविधान की धारा के अनुसार शिक्षण दे सकें। यदि सरकार इस बात की अवहेलना करती है, यदि सरकार आवश्यक धन की व्यवस्था नहीं करती है, तो निश्चित रूप से हमारे संविधान की पवित्रता की रक्षा नहीं होती है। सरकार को इस विषय में एक निश्चित नीति स्पष्ट रूप से जाहिर करनी चाहिये। इसके अतिरिक्त संविधान की इस धारा के अनुसार सरकार समय समय पर क्या करती रहती है और वह कौन सी ऐसी योजना है, वह कौन सा ऐसा कार्यक्रम है जिसके अन्तर्गत हमारे संविधान की इस धारा में जो व्यवस्था की गई है उसकी पूर्ति हमारी सरकार दस वर्ष की निश्चित अवधि में करेगी, यह भी हमको बताते रहने की आवश्यकता है।

इस समय जो मूल प्रस्ताव है उसकी भावना पर सरकार को ध्यान देना चाहिये। जैसा मैंने कहा आज तमाम राज्यों में भिन्न भिन्न प्रकार की शिक्षण की व्यवस्थाएं हैं। वहां प्राथमिक शिक्षा प्रान्तीय भाषाओं में चलती है। राष्ट्रभाषा हिन्दी होने के नाते, हिन्दी को प्राथमिकता दी गई है और इस कारण यदि सारे देश का एक ही प्रकार का कैरिकुलम हो, तो सारा काम भली प्रकार चल सकता है।

आज जो राज्यों में पुस्तकें चलती हैं उनको देखने का मुझे मौका मिला है। प्रत्येक राज्य में पुस्तकों का स्वरूप भिन्न भिन्न है और उनमें बड़ा अंतर है। इसके साथ साथ आप देखेंगे कि उन पुस्तकों में काफी ब्लैकमार्केटिंग चलती है। जो प्रकाशक लोग हैं वे काफी मुनाफा उन पुस्तकों में कमाते हैं। जो बच्चे उन पुस्तकों को खरीदते हैं उनको काफी दिक्कतें होती हैं। उन लोगों को सरकार की ओर से मुफ्त पुस्तकें देने की अभी व्यवस्था नहीं है जिससे गरीब बच्चों के लिये यह एक बोझ प्रतीत होता है। आज बहुत थोड़े बच्चों को भले ही कहीं कुछ स्कालरशिप के रूप में मिल जाता हो या जो पिछड़े वर्ग के बच्चे हैं उनको थोड़ी बहुत सहायता मिल जाती हो, किन्तु साधारण रूप में उन तमाम बच्चों को जो १४ वर्ष तक की अवस्था के हैं कोई सहायता नहीं दी जाती है। तो मैं यह बतला रहा था कि आज पुस्तकों में ब्लैक-मार्केटिंग होती है और इसके रोकने के लिये सारे देश में एक निश्चित नीति के अनुसार किताबों की छपाई की व्यवस्था होनी चाहिये। आज होता यह है कि एक राज्य में एक पुस्तक चार आने की बिक रही है और उसी साइज की

पुस्तक दूसरे राज्य में बारह आने, दस आने, आठ आने या छः आने की बिकती हैं । *(Interruption)* मेरे एक मित्र कहते हैं कि आप आनों की बात करते हैं, आजकल किताबों का भाव रुपयों में रहता है । मैं तो जो छोटी छोटी किताबों में ब्लैकमार्केटिंग चल रही हैं उसकी बात कह रहा हूं । इसलिये निश्चित रूप से सरकार को यह चीज अपने हाथ में लेनी चाहिये और एक निश्चित कैरिकुलम बना करके सारे देश के लिये एक ऐसी शिक्षण पद्धति की व्यवस्था करनी चाहिये जिससे प्रत्येक राज्य में पुस्तकें एक ही रूप में हों और एक ही भाव में बिकें और शिक्षण पद्धति का संचालन इस रूप में हमारे देश में हो कि इस देश की जो आवश्यकताएं हैं वे पूरी हों और हमारे बच्चे शिक्षित हो सकें ।

इन शब्दों के साथ मैं इस प्रस्ताव को सदन के सामने रखता हूं । श्री सरवटे साहब का इस प्रस्ताव पर एक संशोधन हैं और मैं समझता हूं कि वे इस पर और अधिक प्रकाश डालने की कृपा करेंगे ।

THE VICE-CHAIRMAN (SHRIMATI CHANDRAVATI LAKHANPAL) : Resolution moved:

> "This House is of opinion that Government should appoint a Commission immediately to examine the kind of primary education that obtains in the country and to recommend suitable measures with a view to making it available to all children of school-going age."

" MR. Wadia.

SHRI V. S. SARWATE (Madhya Bharat): Mr. Vice-Chairman, I have an amendment and with your permission I would like to move it at this stage. It will make the Resolution more comprehensive and it would be better if it is placed before the House for discussion with my observations.

THE VICE-CHAIRMAN: (SHRIMATI CHANDRAVATI LAKHANPAL) : Yes, you can move it.

SHRI V. S. SARWATE: Mr. "Wadia would excuse me if I am coming in his way.

Madam, I move:

> "That in line 2 of the Resolution, for the words 'of primary education' the words 'and extent of pre-primary and primary education' be substituted."

The purpose of this amendment is that the Commission should examine pre-primary educatior as well as primary education. By 'pre-primary education' I mean that education which is imparted to children or ought to be imparted to children from the age of about two and a half to six years. Taken normally, primary education should also include this education but sometimes the word 'primary' is used in a restricted sense and denotes only the elementary education which is given after a boy and child attains seven years. I have brought forward this amendment in order that the Commission should examine this pre-primary education also and in order to emphasize this aspect of the education which is at present most neglected in this country. Madam, it is extremely necessary that this aspect of primary education be brought in a sufficiently forcible manner before the attention of the Government as well as of the people. Some time before a Member asked me what this pre-primary education was. That is really the mental condition of most of the parents also. They do not understand what is pre-primary education. We of the old generation thought that the psychology and the developmental processes of body and mind of the child and the adult were the same. The same laws governed both and that what was true in the case of the adults was also true in the case of children. That was the-

[Shri V. S. Sarwate.] psychology of the old generation and that is why they are not able to understand, appreciate or realise the changed outlook which is now coming in the psychology of the children. In the beginning of this century it began to be discovered by scientists, by those who were devoted to child studies, that the biological structure of children, the functioning of their organs and the psychological processes of their mind were governed by entirely different laws than those which governed the development of the adults. I will read out one or two authorities on this point. Gessel is one of the foremost American authors on child studies. This is what he says:

> "For perspective we must grant that the pre-school period exceeds all other epochs in developmental importance. It occupies the first seventy months of the human life. It is generally accepted that the foundation of health and intelligence, and the pattern which the child follows in unfolding his personality are laid down in this period. The effects of malnutrition and infectious disease in early years are carried as scars on the bones from childhood to death. Those weakened by ill-health in childhood are rendered more susceptible to breakdown later. The effects of psychic malnutrition or mishandling are as serious, leading sometimes to unhappiness or neurosis, sometimes to delinquency and crime. On the other hand helpful influences and robust health established in early years are of permanent value."

Dr. Montessori, whose name is probably more known in this country, has observed in her book "The Absorbent Mind" as follows: —

> "The first two years of life show a type of psychology entirely different from that of the adult. The child has a type of mind that absorbs knowledge and instructs j itself. The most important faculties are built within the first two years of life. Our religious sentiment, our special feelings of patriotism are built during this period of life. At the age of three the child has already laid foundations of his personality. He has developed powers of absorbing culture without fatigue."

That is why most of the progressive nations of the West give an important place to child education in their scheme of education. I shall give only two instances of countries which stand, as it were, at the two extremes —one of the U.S.A. and the other of the U.S.S.R. In the U.S.A. President Roosevelt, the elder Roosevelt, appointed a conference of laymen and experts in education in 1909 to study the problem of the development of the child and youth. This conference became later on a decennial affair and every tenth year this conference was held. The last sitting was in 1950. Then the conference appointed a fact-finding committee for the benefit of its members so that the committee may collect all the available material including the results of study and research done during the Dast years on child development and place jit before them. The volume which has been produced is called "Personality in the Making" and I would commend it to every Member and every parent. It provides a fascinating reading which would show what the importance of child life is, why we should respect the child, why the laws of child development are different, what exactly has been achieved and established so far by child studies and research and what requires to be implemented in future. They have suggested some measures also. I believe the Government must have got it. That would show them the importance that the U.S.A. attaches to the problem of child development.

Then I shall refer to the U.S.S.R. In the U.S.S.R. in 1944 the Soviet Government made a regulation that the

provi ion of kindergarten and nursery schools for the teaching of children between the age of three and eight years was the duty and responsibility of the State and that the Government was bound to make provi ion for it. And accordingly that Government formed a plan extending over a number of years by which they extended the scope of the nursery schools and kindergarten. In 1 48 the number of pupils studying in kindergarten and nursery schools came to 35 lakhs in a population of 200 million. The Governments of mo t of the progressive countries of the West have declared that education of children between three and six years is their responsibility. It was their duty to provide education to these children because the fate of tomorrow depended upon what these children learnt and how they develo d during their childhood. They e the architects of tomorrow and at why all those Governments ve taken upon themselves the duty providing child education. And at has been the result? I will e a few figures to compare with at is done in India. All these res were supplied to me by the bassies of the countries concerned ated in Delhi and they were lished in a small pamphlet in In- e for the benefit of the delegates he All India Child Education Con- nce which met at Indore in ars b t under the Presidentship n hon Member of this House, Zakir Hassain. Italy has a total lation of 46 million and of these umber of pupils in both Govern- and private institutions is about lion In France out of a total ation of 41 million, there are kh children receiving educa- In Poland the population is 24 n while the number of pupils ut 3 lakhs. Even in little which has only a population lakh the number of pupils is 50 000 The exact number is And compare with this our in India. I had also collect- e tatistics from the various Governments in India for the benefit of these delegates and they were very kind to send me both the number of pupils in their States and the policy they wanted to follow in the future regarding child education. The total number comes to 25,144 in a population of 400 millions, whereas in a population of 46 millions in Italy it is 9 lakhs. That is how matters stand and that is why it is necessary that the Government do appoint a Commission to examine the whole auestion so that they can understand and have a correct perspective of the importance of child education. Even these figures do not give a complete picture, or a complete perspective of the real condition of child education in our country. I shall show that time after time authorities, both in the Congress and in the Government, have declared that the State Governments should take upon themselves this responsibility and duty of providing child education. As hon. Members are aware, the Indian National Congress at its Session in Haripura appointed a Committee under the Chairmanship of Dr. Zakir Hussain, to draw up a scheme of Basic Education. This Committee was to work under the advice and guidance of Mahatma Gandhi. The Committee says in its report: —

> "We feel very strongly the necessity for some organization of preschool education, conducted, or supported by the State, for children between the ages of three and seven.... We are anxious, however, that the State should not overlook its ultimate responsibility in the matter."

Here they emphasise that the State ought to take proper account of its ultimate responsibility in this matter of providing child education.

Then, again, I shall refer to another document of equal importance,—or probably more important in the eyes of the central Government or State Governments—generally known as the Sargent Report. This report is,

[Shri V. S. Sarwate.] in fact, the report of the Central Advisory Board of the Government of India which was entrusted with the task of preparing a scheme on "Post-War Educational Development in India". This was in 1944. This Advisory Board submitted a report. In that report on pages 12 and 13 they say:

> "It is one of the many consequences of the general lack of educational planning in India that a very impressionable, plastic and educationally potent period of a child's life has received so little attention. In most countries in Europe and America it has now been already recognised that the nursery or infants schools have an important part to play in every school system .....Outside India the nursery school has come into its own, and has taken a well-defined place in the fabric of public instruc tion, but the importance of looking after the physical and mental wel fare of future citizens from their earliest years has still to be brought home to the responsible authorities in this country ....."
>
> "It is the duty of the State to come to the rescue, for the sake both of its future citizens and of those that bear them, by providing bright, well equipped and well-staffed Nursery Schools, where the children can be properly looked after, while their mothers are at work. Educationally the Nursery School aims at providing a carefully controlled environment which should cater in the healthiest and wisest manner possible for the mental, physical and social needs of the growing child."

Now, add to this what our revered and beloved Prime Minister says in his message to the Conference which was read at the conference:

> "Gradually we are coming to realise that proper education is vital if a country is to progress and the most important part of education are the earlier years during childhood."

I believe there is nothing more to say regarding the importance of this education. Madam, please allow me five or ten minutes more.

SHRI KANHAIYALAL D. VAIDYA: I particularly curtailed my speech in order to give part of my time to Mr. Sarwate.

SHRI V. S. SARWATE: I shall try to be as brief as possible. In fact, there is nothing more left for me to add to show that it is the duty of the State Governments to take up this matter and make due provision. Unfortunately, in the replies which ". have received from the various States none has admitted that it is thei responsibility. All say very compla cently that this is the duty of th private citizen and of the prival sector to provide such education f< their children. Further, no Sta seems to deplore the plight in whi it stands. Some of them make grai and the grants vary from 25 per ce to 75 per cent, of the admissible e penditure, which is the most libe aid. I want to mention that U.P. 1 deplored the lack of proper edu tional facilities in their State. P bably one or two more State Gove ments have regretted that they cc not do anything more in the fielc child education. Bombay is the t uncompromising.

SHRI D. NARAYAN: They Bombay is spending more than other State on primary educatioi

SHRI V. S. SARWATE: I am ta of pre-primary education and standing on very firm ground be I have received a report from Government itself. The Gover says that pre-primary educatic not the responsibility of the Governments. Grants-in-aid t(schools to the extent of 25 pe of their admissible expenditur being paid to those pre-p schools which are situated i

and backward areas only. So, even the grants which they used to pay to other private agencies have been stopped. They now give aid only to those schools which are situated in slum areas and what do you think would be the amount they are spending on this? Rs. 28,000 out of an expenditure of Rs. 13 crores which is spent on education. Just imagine! Therefore, I say it is necessary that the importance of this and their duty towards children is brought home to them by the appointment of a Commission.

I would like to say a few words about the exact scope of this Commission. I am confining my remarks to the pre-primary stage because it is the most neglected one.

Madam, I would just like to say a j few words about the scope of pre- j primary education. When the White House Conference was being held, it was said that "The purpose of the Conference shall be to consider how we can develop in the children the mental, emotional and spiritual qualities essential to individual happiness and to responsible citizenship, and what physical, economic and social conditions are deemed necessary for this • development." And nowadays the child study is being-pursued in a co-operative manner.

Now, Madam, I would like to quote in this connection from the Encyclopaedia Britannica. It is stated there as follows:

> "There is an increasing tendency to widen the scope of child psychology so as to include all the phases of child development, and to incorporate therein genetic psychology, biometrics, anthropometry and pediatries, as well as clinical, educational and child guidance activities."

All these are to be co-ordinated in the child study.

In conclusion, Madam, I have only to say that all the hon. Members here are parents, grandparents or guardians of their children, and all are anxious to see that their children develop a healthy personality. For that reason it is very necessary to appoint a Commission to go into all these questions. I hope that the House will unanimously adopt this Resolution.

PROF. A. R. WADIA (Nominated): Madam, I rise to support in a very wholehearted way the main Resolution of my friend, Mr. Vaidya.

I am afraid. I shall have to give only a very qualified support to the lucid exposition that we have just had from Mr. Sarwate. I do not disagree with Mr. Sarwate on what he has said. There was a very wis* Jesuit who said "Give me a child foi the first seven years, and you can do with him what you like afterwards.' I quite appreciate all this. I can quite appreciate that the first seven years are the most impressionable and the most important period perhaps in the life of a person. But the question is whether we can give full effect in our country with our limited resources to the demand that Mr. Sarwate has made. At the present moment, I know that in Bombay for example—and which is a very wealthy city comparatively—we have got a number of nursery schools, and I can say with confidence that the education of a child in a nursery school costs much more than that of a student in a college. Now, if this be the case, is it possible for any Government, in the near future, to implement the ideals of Mr. Sarwate? However, if he merely mentions it as a sort of pious hope, I have not the slightest objection if the question is referred to the Commission which, I trust, the Government of India will be pleased to appoint.

Now coming to the main Resolution, Madam, this Commission should have been appointed years ago. If there was any logic in our Government's policies, the Commission on Primary Education should have pre-

[Prof. A. R. Wadia.] ceded the appointment of a Commission on University Education or on Secondary Education. It would have been definitely better if at the time the Commission on University Education was appointed, the Commission on Primary Education had been appointed, because then we could have built up the whole basis of educational fabric from the bottom upwards. Unfortunately, this has not been done, and as a result, our primary education has suffered very badly.

There is another very great and important reason why this Primary Education Commission should be appointed, and that is this. Primary education after all is going to be imparted, probably not merely in the recognised fourteen languages in our Constitution, but in even more languages in different parts of India. And it is a very sound proposition that every child should be educated, at least in the primary stage, in his mother-tongue. But this will lead to an immense difference of outlook because of different methods of teaching in different States. And, to overcome that defect, if a representative Commission were appointed which could give a correct directive to the different States as to what they should aim at in achieving primary education, and what cost they should incur, and what ideals they should have before them, I think the appointment of such an educational commission would be abundantly justified. It is absolutely necessary at the present stage.

Now take for example the matter of cost. Cost is immense. Unfortunately we know that the primary school teacher is the worst-paid in the whole of India now. Even our menial servants get much more than the primary school teacher. It is a matter of crying shame, and whatever may be the strain on the resources of our Government, this strain will have to be faced somehow in order to justify our democracy. And I do not believe that any democracy can be really successful with 80 per cent. illiterates. If we are going to make something of our democracy, we must have cent, per cent, literacy as soon as possible, maybe within ten years or even within twenty years, I don't mind but that should be our definite objective. And that is going to cost fe good deal.

Now it seems to me that a Commission of the type that we have in mind should face the question of how to meet this excessive cost. Well, I shall not presume to anticipate the recommendations of such a Commission. But years ago, I ventured to suggest, as Director of Public Instruction in Mysore, that if the income of our poor primary school teacher could be supplemented by the endowment of a certain piece of land to each village school, so that he could grow at least his own food and he could be given a little house, and perhaps a little addition to his pay as a primary school teacher, with the additional allowance he may get as a Post Master, or for some other functions which are usually assigned to our primary school teachers, it may be possible to get good teachers even on comparatively low wages for our primary schools. And this problem of cost they will have to face. And I think if we go back to our old village panchayat days, when the villa/gers willingly gave something in kind to the village teacher, that would also be very welcome at this stage, even in the twentieth century.

Then there is the question of curriculum. Of course, we hear a good deal about basic education. But I am afraid, there is a good deal of difference of opinion as to what exactly basic education means, or should mean. In its pure form, I am afraid, it is going again to cost us a lot, and it is a question for the Commission to decide whether every one of owr primary schools should only be devoted to the ideals of a basic school, or some schools might be

basic and the other schools might be permitted to develop on the more orthodox or cheaper lines, because some sort of cheaper education is much better than no education at all. My unfortunate experience in this country is that we are idealists, and we very often try to do too much with our limited resources and the result is that, while we aim at the maximum, we fail to achieve even the minimum. Now, Mr. Sarwate was a little critical of the Bombay Government. I must admit that we people in Bombay are somewhat hard-headed. We are not easily carried away by slogans; we are not easily carried away by mere words. We are business people and we look at things as business propositions: "How much have we got? What is the use that we are going to make of this to produce the maximum result?" It is from this standpoint that the Bombay Government has said—and I am afraid said rightly—that the province of pre-primary education belongs to the wealthy citizens. Those who can afford it, by all means let them have j it. After some years when we have succeeded in achieving cent, per cent. Hteracy in our land—perhaps at that time India will become richer also— it would certainly be time to think of pre-primary education. At the present moment, I am afraid it is a little premature. Considering the question >f cost, considering the question of curriculum and the fact that we are going to make so many different languages the media of instruction in the primary schools, it is necessary to-develop some common ideals, some common lessons. Our text-books today might be inconsistent with one another. For example, the text-books in one language may make no mention of India but extol one particular State to which that language belongs; another linguistic State might do exactly the same thing and a third might lay emphasis on Indian patriotism. "These little contradictions will unfortunately produce a wgry unhealthy result on the minds of our students and that danger is there. Therefore, it would be a good thmg if the Central Government were to make itself responsible for having a certain amount of general control on the type of text-books, on the quality of the text-books and on the price of the text-books produced in different States. I know that the Central Government will immediately say that it is not its business and that under the Constitution it belongs to the States. We all know that, but the. Central Government should play the role of a parent controlling the activities of all its children. It is very necessary to control the activities of our States, because we know how the States tend to go much too far in the direction of independence. After all the independence of the States is a very relative thing. The States exist only as the children of India. The primary thing that we aim at is the well-being of India.

THE DEPUTY MINISTER FOR EDUCATION (DR. K. L. SHRIMALI): What about problem children?

SHRI M. GOVINDA REDDY: Problem children? The Education Ministry wonders why there should be children at all.

PROF. A. R. WADIA: I don't know whether the Deputy Minister means how genuine problem children have to be dealt with or that the States are problem children. Whatever it may be, in either case, they will have to be dealt with. For these reasons, I heartily support the idea of appointing this Commission, and I am very glad that Mr. Vaidya, who has moved this Resolution, has had the active support of so many of his other colleagues, and I am perfectly certain that, so far as this question is concerned, there can be no party politics, there can be no talk of communism or Congress. We are all interested in the education of our children. We are all interested in having a real, genuine democracy which can be built up only on sound education. Full one hundred per cent, literacy is the ideal

[Prof. A. R. Wadia.] which we aim at and therefore trust that *his Resolution will be passed unanimously.

श्री देवकीनन्दन (मुम्बई) : माननीय सभापति जी, जो प्रस्ताव सदन के सामने हैं उसका स्वागत करते हुए मैं यह तो नहीं कह सकता कि इस प्रस्ताव को सम्पूर्णतः मैं मानता हूं। स्वागत तो मैं इस कारण कर रहा हूं कि प्रस्ताव की वजह से एक महत्वपूर्ण विषय, यानी प्राथमिक शिक्षा के सम्बन्ध में यहां पर चर्चा हो जायेगी। आप जानते हैं कि हमारे संविधान ने यह मर्यादा निश्चित की है कि १० वर्ष के अन्दर यानी १९६० तक इस मुल्क में ६ से १४ वर्ष तक के बच्चों को फ्री और कम्पलसरी शिक्षा दी जायेगी। अभी हम सन् १९५५ में हैं। पांच वर्ष अभी बकाया हैं।

आज प्राथमिक शिक्षा की क्या हालत है यह हमें सोचना चाहिये। जहां तक मुझे पता है, आज प्राथमिक शिक्षा में जो लड़के पढ़ रहे हैं उनकी तादाद करीब एक करोड़ ८८ लाख हैं। यह एक करोड़ ८८ लाख या १० लाख कहिये, ६ से ११ वर्ष तक के लड़के और लड़कियों की समूची तादाद नहीं है। ६ से ११ वर्ष के लड़कों की जो संख्या है उसके ४० टका को ही आज स्कूलों में पढ़ाया जा रहा है, यानी ६ से ११ वर्ष तक की उम्र के सब लड़के और लड़कियों को नहीं पढ़ाया जा रहा है। उन में से ६० टका अभी बाकी है। गत पांच वर्ष में हम ज्यादा से ज्यादा यहां तक पहुंच सके हैं कि सैंकड़े में ४० टका, ६ से ११ वर्ष तक उम्र के लड़कों के पढ़ाने की व्यवस्था कर सके हैं। ६० टका ६ से ११ वर्ष तक उम्र के लड़के अभी बाकी हैं।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में कहा गया था कि यह मर्यादा ६० टका तक ले जाई जायेगी परन्तु दुःख है कि यह वहां तक नहीं पहुंची। मुझे यह भी शक है कि यह ५० टका तक भी पहुंची है या नहीं। आज इन ४० टका लड़कों पर सरकार का कितना खर्च हो रहा है? करीब ५० करोड़ रुपया खर्च होता है। आम शिक्षा पर हिन्दुस्तान की प्रांतीय सरकारों का और केन्द्रीय सरकार का करीब ११२ करोड़ रुपया खर्च होता है, जिसमें ४१ टका खर्च प्राथमिक शिक्षा पर होता है, यानी इस पर करीब ५० करोड़ रुपया खर्च हो रहा है। इसका अर्थ यह हुआ कि ५० करोड़ रुपया खर्च करके हम सिर्फ ४० टका ही ६ से ११ वर्ष तक के लड़के और लड़कियों को पढ़ा सकते हैं। यानी अभी तो इस उम्र के भी ६० टका लड़के वगैरे पढ़ाये रह गए हैं। इसके बाद ११ से १४ वर्ष तक, यानी अभी सब मिलाकर करीब और ५--५॥ करोड़ लड़के और लड़कियां बाकी हैं जिनकी शिक्षा का हमें और प्रबन्ध करना है। तो हमें यह सोचना चाहिये कि रहे सहे इन पांच वर्षों में क्या यह हो सकता है और यदि इन पांच वर्षों में हमें इसे पूरा करना है तो फिर प्राथमिक शिक्षा के सम्बन्ध में अपने कदम को कितनी तेजी से बढ़ाना है। यदि हम संविधान की आज्ञा के अनुसार ६ से १४ वर्ष की उम्र तक के लड़के और लड़कियों को प्राथमिक शिक्षा देना चाहते हैं तो हमें सेकेंड फाइव ईयर प्लान में करीब २०० करोड़ रुपया खास कर के प्राथमिक शिक्षा के लिये ही रखना चाहिये और यदि हम यह तजवीज नहीं करते हैं, तो ६ से १४ वर्ष तक क्या ६ से ११ वर्ष तक की उम्र के सभी बच्चों की भी शिक्षा पूरी नहीं कर सकेंगे। तो जो सब से पहला और बड़ा सवाल है और जो सब जगह उठाया जाता है वह पैसे का है। यही बात १९१३ में स्वर्गीय श्री गोपालकृष्ण गोखले जी ने उस वक्त की संसद् के सामने, संसद् कहिये या असेम्बली कहिये उसके सामने, कही थी कि जब तक केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय सरकारों की पैसे से मदद नहीं करेगी तब तक फ्री और कम्पलसरी प्राइमरी एजुकेशन नहीं हो सकेगी। वही हालत आज तक मौजूद है। आज भी हालत यही है कि जब तक केन्द्रीय सरकार प्रादेशिक सरकारों को रकम की पूरी मदद नहीं देगी तब तक संविधान में लिखे मुताबिक ६ से १४ वर्ष तक की उम्र के लड़के और लड़कियों की प्राथमिक शिक्षा कभी भी फ्री एंड कम्पलसरी नहीं की जा सकती है। तो इस प्रस्ताव पर बोलने

का मेरा खास मकसद यही है कि द्वितीय पंचवार्षिक योजना में हमें इसको सब से पहली, प्रथम, प्रायोरिटी देनी चाहिये कि फ्री और कम्पलसरी प्राथमिक शिक्षा होने के लिये कम से कम २०० करोड़ रुपयों की सालाना व्यवस्था प्लान में की जाय। प्रस्ताव में जो आवश्यक बात होनी चाहिये थी वह यही होनी चाहिये थी लेकिन प्रस्ताव kind I f pii mary education What kind of primary education cbt 1 ns in the country"

मैं प्रस्तावक महोदय से कहना चाहता हूं कि यह सवाल तो अब रहा नहीं। यह तो हमारे शास्त्रज्ञों ने निश्चित कर लिया है, हमारी केन्द्रीय सरकार ने और हमारी प्रादेशिक सरकारों ने भी इसे मंजूर कर लिया है कि हमारी प्राथमिक शिक्षा का स्वरूप बेसिक होगा यानी जिसे नई तालीम या बुनियादी तालीम कहते हैं वही हमारा तर्ज होगा। तो उस विषय में तो किसी तरह की शंका रही ही नहीं है।

मुझ से पहले जो वक्ता बोल रहे थे उनसे मैं कहना चाहता हूं कि बड़ी अच्छी बात है, मुझे बड़ी खुशी है कि वह बम्बई से आते हैं और उन्होंने बम्बई का बड़ा अभिमान दिलाया। मैं बम्बई से आता हूं और मुझे भी अभिमान है, परन्तु मैं याद दिलाना चाहता हूं कि बम्बई सरकार ने प्राथमिक शिक्षा का स्वरूप बेसिक मान लिया है, बुनियादी मान लिया है और अपने स्कूलों को बुनियादी स्कूलों में बदल देने के लिये हिन्दुस्तान में यदि कोई ज्यादा से ज्यादा खर्च कर रही है तो वह बम्बई सरकार कर रही है। इस बात का मुझे अभिमान है और वाडिया साहब को भी होना चाहिये परन्तु बेसिक तर्ज से कुछ आपका मतभेद मालूम होता है। मैं उसमें जाना नहीं चाहता.....

श्री ह० प्र० सक्सेना : आपने तो रेजोल्यूशन को सपोर्ट किया है ?

श्री देवकीनन्दन : आपने ठीक तरह से सुना नहीं।

श्री सुरेन्द्रनाथ द्विवेदी : बुनियादी शिक्षा के बारे में डिफरेंस है।

श्री देवकीनन्दन : दूसरा सवाल, जब हम प्राथमिक शिक्षा पर विचार करते हैं, तो शिक्षकों का आता है। आज हालत यह है कि ४० परसेंट से ज्यादा ट्रेंड शिक्षक हमारे प्राइमरी स्कूलों में नहीं हैं यानी यदि आज की हालत में हम अपनी प्राथमिकशालाओं को ट्रेंड शिक्षक देना चाहते हैं तो हमें ६० टका नये ट्रेंड शिक्षक पैदा करने होंगे और उसके लिये भी पैसा चाहिये। क्योंकि जब तक ट्रेंड शिक्षक नहीं होंगे तब तक हम आज जो प्राथमिक शिक्षा को सुधारना चाहते हैं वह कभी नहीं बदल सकेंगे। जब हम प्राथमिक शिक्षा को बुनियादी स्वरूप देना चाहते हैं तो यह आवश्यक हो जाता है कि हम पहले शिक्षकों को बुनियादी तालीम की शिक्षा दें और उस से ही आज हमारे बहुत कम शिक्षक ट्रेंड हैं।

इसके अलावा एक सब से बड़ी दिक्कत की जो बात है वह यह है कि प्राथमिक शिक्षकों को जो तनख्वाह दी जाती है वह इतनी कम दी जाती है कि उससे ज्यादा, यहां तक कि शायद उससे दुगुनी या तिगुनी, तनख्वाह हमारी इस केन्द्रीय सरकार के पियून्स को और सिपाहियों को मिलती है। मेरे पास अंक हैं, उनको आप देखियेगा तो उनसे पता चलेगा कि कुछ राज्यों में इनको कम से कम २५ रुपये माहवार तनख्वाह दी जाती है और एक राज्य में तो २५ पर खत्म भी हो जाती है, दूसरे राज्यों में २५ से ६५ पर खत्म होती है और कुछ राज्य ऐसे हैं जो शुरू में ३० देते हैं, ४० देते हैं और ज्यादा से ज्यादा हैदराबाद राज्य में ६५ रुपये मिलती है और ११५ पर खत्म होती है। तो

[श्री देवकीनन्दन]

आप समझ सकते हैं कि एक शिक्षक को जो कि गांव का पढ़ा लिखा एक गुरू कहलाता है उसे शुरू में २५ रुपये मिलें और २० या ३० वर्ष नौकरी करने के बाद ज्यादा से ज्यादा ५५ या ६५ या १०० पर पहुंचे तो वह किस तरह से दिल से काम कर सकता है. अपना दिल प्राथमिक शिक्षा में लगा सकता है और हमारे बच्चों की देखभाल कर सकता है। यह मांग सारे देश से की जा रही है कि प्राथमिक शिक्षकों की तनख्वाह बढ़ाई जाय, उनका दर्जा बढ़ाया जाये, उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाई जाये। प्रतिष्ठा कैसे बढ़ सकती है, दर्जा कैसे बढ़ सकता है जब कि पेट खाली है ? तो प्राथमिक शिक्षा पर विचार करते समय जहां हमें शिक्षकों की शिक्षा का विचार करना चाहिये वहां उसी तरह से शिक्षकों के पेट का यानी उनकी तनख्वाह का भी विचार करना चाहिये। जब तक हम यह विचार नहीं करेंगे तब तक वह सवाल पूरा नहीं होता। आज बहुत से राज्य ऐसे हैं जहां पर कि शिक्षकों के साथ जिस तरह से व्यवहार किया जाता है, जिस तरह का बर्ताव किया जाता है, वह बहुत शर्म की बात है।

इसके बाद मैं एक बात और कहना चाहता हूं। आज जो हमारी तीसरी दिक्कत है वह स्कूलों की इमारतों की है। आप कहीं चले जाइये, देहातों में प्राथमिक स्कूलों की ऐसी इमारतें आपको दिखाई देंगी कि जहां इंसान तो क्या जानवर भी आराम से नहीं बैठ सकते। जो हमारे भविष्य के नागरिक हैं, जिन पर हमारे भविष्य की सारी बागडोर है वे हमारे बच्चे जब तक अच्छे वातावरण में, अच्छी जगह जहां कि वे ठीक तरह से आरोग्य रह सकें, उन में नहीं पढ़ेंगे और ऐसी जगह पढ़ेंगे जहां कि न तो खिड़कियां हैं, न उजाला है और न हवा है.....

श्री ह० प्र० सक्सेना : बरगद का दरख्त तो है ?

श्री देवकीनन्दन : जी हां, वह दरख्त तो हो सकता है। वहां तो सब को जाना है। तो मेरा कहना है कि प्राथमिक शिक्षकों के सवाल के साथ साथ शिक्षालयों की हालत भी हमें दुरुस्त करनी चाहिये यानी शिक्षालयों की इमारतों के बारे में भी हमें विचार करना चाहिये और उसके लिये भी द्वितीय पंच-वार्षिक योजना में खास रुपयों की व्यवस्था होनी चाहिये और जितनी व्यवस्था आप शिक्षा और शिक्षकों के लिये करेंगे उतनी ही व्यवस्था आपको इमारतों के लिये करना होगी यानी आपको करीब करीब दो सौ या ढाई सौ करोड़ रुपया खास कर के शिक्षालयों के लिये रखना होगा। तो इन तमाम बातों से आपको पता चलेगा कि प्राथमिक शिक्षा के मामले में आज हमारा कदम आगे क्यों नहीं बढ़ रहा है ? इसका मतलब यह नहीं है कि कोई राज्य यह नहीं चाहता है कि प्राथमिक शिक्षा के ऊपर खर्च न बढ़ाया जाये, कोई राज्य यह नहीं चाहता कि उस राज्य के ६ से १४ वर्ष तक के हर एक बच्चे को शिक्षा न मिले, परन्तु सवाल पैसे का आ जाता है। हां, यह जरूर देखा गया है कि जिस प्राथमिक शिक्षा को प्रायरिटी देनी चाहिये वह नहीं दी जाती है क्योंकि आप देखेंगे कि ११२ करोड़ में से ज्यादा से ज्यादा ५० करोड़ रुपया प्राथमिक शिक्षा पर खर्च होता है जिसमें कि २ करोड़ बच्चे पढ़ते हैं और सेकेंडरी एजुकेशन तथा यूनिवर्सिटी एजुकेशन के ऊपर करीब ७०, ७२ करोड़ रुपये खर्च होते हैं जब कि उन में लड़कों की तादाद कुछ लाख है, बहुत तो दस पांच लाख ही हो सकते हैं। यानी यहां भी एक तरह का कैपिटलिज्म है। थोड़ों को बहुत और ज्यादा को कम।

श्रीमती उपसभाध्यक्षा (श्रीमती चन्द्रावती लखनपाल) : दंडकीनन्दन जी, आपका समय समाप्त हो चुका है. अब आप खत्म कीजिये ।

श्री दंडकीनन्दन : मैं अभी कुल १० या ११ मिनट बोला हूं ।

श्रीमती उपसभाध्यक्षा (श्रीमती चन्द्रावती लखनपाल) : आपने १५ मिनट लिये हैं ।

श्री दंडकीनन्दन : मेरा खयाल है कि मैं १० या ११ मिनट बोला हूं । मुझे आप ५ मिनट आगे दे दीजियेगा, क्योंकि ५ बज गये हैं ।

श्रीमती उपसभाध्यक्षा (श्रीमती चन्द्रावती लखनपाल) : आप ५ मिनट आगे के दिन बोल सकेंगे ।

THE VICE-CHAIRMAN (SHRIMATI CHANDRAVATI LAKHANPAL) : The House now stands adjourned till 11 A.M. on Monday, the 22nd August 1955.

The House then adjourned at five of the clock till eleven of the clock on Monday, the 22nd August 1955.